17 दिसम्बर 2007, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

जैन
पथप्रदर्शक
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

पर से एकत्व और ममत्व तोड़ने का एकमात्र उपाय प्रत्येक वस्तु की स्वतंत्र सत्ता का सम्यक् बोध ही है।
ह्न बारह भावना अनुशीलन, पृष्ठ-82

वर्ष : 30, अंक : 18 सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : 251 रुपये
दिसम्बर (द्वितीय), 2007 प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा** वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

जहाँ जो परम्परा चल रही है ...?

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल, राष्ट्रीय अध्यक्ष, अखिल भा. दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद्

दिगम्बर जैन समाज की एकता के लिये यह परम आवश्यक है कि पूजनपद्धति के सन्दर्भ में जहाँ जो तेरापंथी या बीसपंथी परम्परा चली आ रही है; आगे भी वहीं चलती रहे, उसमें किसी भी प्रकार का कोई परिवर्तन नहीं किया जाय। इस बात को समाज के सभी नेतृवर्ग ने सर्वसम्मति से स्वीकार किया है।

दिगम्बर जैन महासभा के अध्यक्ष श्री निर्मलकुमारजी सेठी जब लन्दन में मुझसे मिले तो उनकी जबान पर पहला यही सवाल था कि पूजा पद्धति आदि की जहाँ जो परम्परा चल रही है, वहाँ वही चले; उसमें किसी भी प्रकार का कोई परिवर्तन न किया जाय ह्न क्या आप इस बात से सहमत हैं?

उनके प्रश्न के उत्तर में जब मैंने उनसे कहा कि हम इस बात से पूरी तरह सहमत हैं तो वे उछल पड़े और बड़े ही उत्साह से कहने लगे कि अब हमारी और आपकी एकता के मार्ग की आधी बाधायें तो दूर हो ही गई हैं। उक्त सन्दर्भ में समाज के जिन-जिन कर्णधारों से बात हुई; सभी ने यही मत व्यक्त किया।

ऐसी वैचारिक पृष्ठभूमि में यदि बावनगजा (बड़वानी) में होने वाले महामस्तकाभिषेक के सन्दर्भ में विचार करें तो कोई कारण नहीं है कि हम वहाँ चली आ रही परम्परा में किसी प्रकार का बदलाव करें।

पत्रों में प्रकाशित समाचारों से जब समाज को यह पता चला कि वहाँ पंचामृत अभिषेक होगा तो समाज में खलबली मच गई; क्योंकि अब तक वहाँ की परम्परा तेरापंथानुसार जलाभिषेक करने की ही रही है।

इन्दौर या उसके आस-पास की समाज में यह बात बहुत जोरों से फैल रही है कि यदि सर सेठ हुकमचन्दजी साहब होते तो यह किसी भी रूप में संभव नहीं था।

हमारे पास अनेक लोगों के पत्र आ रहे हैं; जिनमें उक्त सन्दर्भ में हमारे विचार जानने का प्रयत्न किया गया है और इस दिशा में कुछ करने का आग्रह भी किया गया है। यद्यपि हमारी नीति तो यह है कि हम समाज के या तीर्थों के मामलों में अनावश्यक रूप से कहीं न उलझें; तथापि उक्त संदर्भ में समाज के सभी कर्णधारों से विनम्र अनुरोध करना चाहते हैं कि समय रहते ऐसा कुछ करें कि हमारा यह तीर्थराज और उसके महामस्तकाभिषेक का यह मंगल अवसर दिगम्बर समाज में बिखराव लाने का हेतु न बने, कटुता उत्पन्न करने का प्रसंग न बने।

जल से अभिषेक करने में तो किसी को कोई परहेज होता ही नहीं है; अतः सभी समाज भगवान का जलाभिषेक कर अपने जीवन को सफल व सार्थक करें तो वातावरण में जो पवित्रता रहेगी, वह अपने आप में एक बहुत बड़ी उपलब्धि होगी।

हमें आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि समय रहते हम सब किसी न किसी ऐसे सर्वसम्मत निर्णय पर अवश्य पहुँच जायेंगे कि जिसमें किसी एक भी व्यक्ति को मानसिक आघात न पहुँचे और यह काम पूरी सफलता के साथ निर्विघ्न सम्पन्न हो जावें ह्न इस पवित्र भावना से विराम लेता हूँ। ●

फैडरेशन का राष्ट्रीय अधिवेशन उदयपुर में

अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन का 28 वाँ राष्ट्रीय अधिवेशन रविवार, दिनांक 23 दिसम्बर, 07 से 25 दिसम्बर, 07 तक झीलों की नगरी उदयपुर (राज.) में आयोजित होने जा रहा है।

फैडरेशन की सभी शाखाओं एवं उनके पदाधिकारियों को अधिवेशन के सन्दर्भ में विस्तृत पत्र भेजे जा चुके हैं। अधिवेशन में सभी शाखाओं के प्रतिनिधी एवं सदस्य तो उपस्थित होंगे ही इसके अतिरिक्त समाज के युवा समुदाय को भी अधिवेशन में उपस्थित होने हेतु आग्रहपूर्ण आमंत्रण है।

अपने पधारने की पूर्व सूचना कृपया केन्द्रिय कार्यालय, ए-4, बापूनगर, जयपुर एवं सुजानमलजी गदिया, कानजी का हाटा, उदयपुर, (फोन नं. 0294-2521124) को अवश्य देवें।

सम्पादकीय –

परिणामों की विचित्रता

ह्न पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

बात पुराने जमाने की है, जब छोटे–छोटे रजवाड़े हुआ करते थे। हस्तिनापुर नगरी के राजा का नाम संवर था। राजा संवर के इकलौते बेटे का नाम था विद्युच्चर। विद्युच्चर जन्मजात प्रतिभाशाली और बुद्धिमान तो था ही, कलाप्रेमी भी था।

विद्युच्चर वाद्य–संगीत, अस्त्र–शस्त्र, नृत्य–गान आदि अनेकों कलाओं में निपुण था। उसकी माँ श्रीषेणा को उसकी कला–कुशलता पर बहुत नाज था। वह उसकी कलाओं की विशेष प्रशंसक थी।

अपनी प्रशंसा सुनकर किसे प्रसन्नता नहीं होती? किसे प्रोत्साहन नहीं मिलता? युवराज विद्युच्चर भी इसका अपवाद नहीं था। जब कोई उसकी प्रशंसा करता तो वह खूब प्रसन्न होता तथा प्रोत्साहित होकर नित्य नई–नई कलायें सीखने का प्रयत्न करता।

एक दिन उसके मन में आया ''**चोरी करना भी तो एक कला है।**'' तभी तो किसी साहसी कवि ने यह कहने का साहस जुटाया कि ह्न

''**दुनियाँ में सब चोर–चोर हैं, कोई छोटा चोर कोई बड़ा चोर।**
चोरों का चहुँ ओर शोर है, दुनिया में सब चोर–चोर हैं।।''

बस, अन्तर इतना है कि कच्चा चोर चोर कहलाता है और पक्का चोर साहूकार। जो चोरी करते पकड़ा जाय वह कच्चा चोर है और जो इतनी सफाई से चोरी करे कि कभी पकड़ा ही न जाय, वह पक्का चोर; उस दो नम्बर के चोर को ही साहूकार कहते हैं, सेठ कहते हैं।

लूटा हुआ माल लुटाने पर उन्हें जेल नहीं; बल्कि ऊपर बैठने को मंच मिलता हैं, सम्मान में पहनने को मालायें मिलतीं हैं।

इनके अतिरिक्त तीसरे किस्म के चोरों का नाम है राजा–महाराजा। इनकी तो पुराणों में भी प्रशंसा की है। एक अपभ्रंस भाषा के कवि ने तो यहाँ तक स्पष्ट ही लिखा है ह्न ''**जो बलवंत चोर सो राणउ**'' अर्थात् बलवान चोर को ही राजा कहते हैं।

अपने बाहुबल पर और हथियारों की नोंक दिखाकर अनेक छोटे–छोटे राजाओं के राज्यों को छीनकर एवं उन्हें अपना गुलाम बना कर ही तो बलवान चोर महाराजा बनते हैं। इससे स्पष्ट है कि निःसंदेह चोरी भी एक कला है, यदि चोरी करना कला नहीं होती तो ये चोर इज्जत कैसे पाते। आज ये कलाकार ही तो जगत में सबसे अधिक इज्जत पा रहे हैं। अतः इस कला में तो मुझे महारत हासिल करनी ही होगी।''

यह सब सोचकर युवराज विद्युच्चर ने चोरी कला में कुशलता पाने का काम अपने घर से ही प्रारंभ करने का निर्णय लिया; क्योंकि उसे इसमें ही सबसे कम खतरा दिखाई दिया।

विद्युच्चर चौर्यकर्म में अभी अनाड़ी तो था ही और राजाओं के पहरेदार इतने चौकन्ने रहते थे कि बाहर से चोर तो क्या? कोई चिड़िया भी पर नहीं मार सकती थी। इसकारण ज्यों ही चोरी हुई तो सर्वप्रथम महल में ही चोर की तलाशी की गई।

वैसे तो युवराज विद्युच्चर पर चोरी करने का संदेह करने का कोई प्रश्न ही नहीं उठ सकता था, पर ''जब थाली खोती है तो गागर में हाथ डालते हैं'' इस कहावत के अनुसार शयन कक्ष की भी तलाशी ली गई उसमें विद्युच्चर रंगे हाथों पकड़ में आ गया।

दूसरे दिन पहरेदारों द्वारा डरते–डरते जब युवराज विद्युच्चर को राज दरबार में चोर के रूप में पिता के समक्ष प्रस्तुत किया गया तो पिता आश्चर्यचकित हो दाँतों तले उँगली दबाकर रह गये।

ह्न ह्न ह्न

पिताजी ने बहुत समझाया बेटा ! मैं जानता हूँ कि तुम्हें कलाओं से बहुत लगाव है, और तुमने चौर्यकला सीखने के चक्कर में यह काम किया होगा; क्योंकि अन्यथा तुम चोरी क्यों करते? मुझे किस वस्तु की कमी है। तथा क्या चोरी करना भी कोई कला है। अरे! यह तो निन्दनीय काम और दण्डनीय अपराध है, बदनामी का कारण भी है। अतः तुम ऐसी भूल पुनः कभी नहीं दुहराना।

विद्युच्चर ने साहस बटोर कर आँख बदलते हुए व्यंग में कहा ह्न ''हे न्यायाधिपति ! यदि न्याय–नीति के अनुसार यह बुरा काम है तब तो आपको यह राज–पाट और राज सिंहासन भी छोड़ना पड़ेगा; क्योंकि राजा–महाराजाओं को तो पुराणों में भी सबसे बड़ा चोर कहा गया है। अरे पूज्य पिताजी ! मैंने तो अपने घर का धन ही चुराया है, जिस पर अन्ततोगत्वा मेरा ही हक है। राजा–महाराजा तो पराया हक हड़पते हैं। दूसरों की पसीने की कमाई पर ऐश–आराम और मौज–मस्ती करते हैं। इसप्रकार राजा–महाराजा तो चोर नहीं, बल्कि डाकुओं की श्रेणी में आते हैं और प्रजा के पालक कहलाते हैं।

ह्न ह्न ह्न

राजा संवर बेटे के तर्कपूर्ण विचार सुनकर अवाक् रह गया। उसे उस दिन महसूस हुआ कि विद्युच्चर साधारण युवराज नहीं है, यह तो साहसी और बुद्धिमान भी है। उसे कहाँ–कहाँ से ऐसी बातें

सूझतीं हैं। मैं उसे समझाना चाहता था; पर उसने तो मुझे ही समझा दिया। अब तो मुझे भी सोचना पड़ेगा। वैसे भी किसी कवि ने ठीक ही कहा है कि ह्न ''**राजसुख तोहू भरी कीच को कमल है।**'' राज सत्ता हासिल करने के लिए युद्धों में कितना खून बहता है? सैकड़ों माँ-बहिनें विधवा हो जाती हैं, बालक अनाथ हो जाते हैं। योद्धाओं का अमूल्य मानव जीवन हमारे तुच्छ स्वार्थ में यों ही अनायास ही नष्ट हो जाता है। इसतरह महाराजा बड़े चोर तो हैं ही, हत्यारे भी हैं। इसीलिए तो कहा है कि ह्न यदि चक्रवर्ती सत्ता के सिंहासन पर ही प्राण छोड़ता है तो वह नियम से नरकगति को प्राप्त होता है।''

यह सोचकर राजा संवर स्वयं राजपाट, भोग विलास एवं मौज मस्ती से विरक्त हो गया। उसने सोचा बात तो बिल्कुल ठीक ही है ह्न किसी का शोषण करके अपना पोषण करना भी तो चोरी ही है। आज युवराज ने साहस करके तो मेरी आँखें खोल दी हैं, उसके लिए मैं उसका सदैव ऋणी रहूँगा।

राजा संवर ने पुत्र की बुद्धि की प्रशंसा करते हुए स्वयं को सचेत करने के लिए पुत्र को मन ही मन धन्यवाद दिया और कहा ह्न बेटा! तूने ठीक ही कहा है। अब मैं भी शीघ्र ही सत्ता के सिंहासन को छोड़कर जिनदीक्षा लेकर आत्मा का कल्याण करूँगा।

ह्न ह्न ह्न

पिता की बात विद्युच्चर ने सुन तो ली; परन्तु उसे अभी अपने ही पहरेदारों द्वारा रंगे हाथों पकड़े जाने पर अपने चौर्यकर्म की कला में असफल होने का अफसोस रहा, इस कारण एक बार पुनः चौरकर्म में महारत पाने के प्रयोजन से सेठ अर्हद्दास के घर गया।

होनहार के अनुसार सब समवाय सहज मिल जाते हैं। विद्युच्चर गया था चोरी में महारत हासिल करने और वहाँ अर्हद्दास के पुत्र जम्बूकुमार के साथ चारों पत्नियों की वैराग्यवर्द्धक वार्ता सुनकर उसे इस बात का आश्चर्य हुआ कि ह्न ''जब शादी के प्रथम मिलन में सारा जगत प्रेमालाप करता है, पाँचों इन्द्रियों के विषयों में मस्त रहता है, उस समय ये तत्त्वचर्चा, ये वैराग्य की बातें, ये संसार-शरीर और भोगों की निरर्थकता का चित्रण! जब ऐसे ही विचार थे तो शादी ही क्यों की इन्होंने?''

विद्युच्चर यह सब सोच ही रहा था कि यही प्रश्न एक रानी की ओर से उठा! उत्तर में जम्बूकुमार ने समाधान करते हुए किसी पर दोषारोपण न करते हुए स्पष्टीकरण किया कि ह्न ''**यह तो वस्तु के स्वतंत्र परिणमन की बात है। कल तक अपने चारित्रगुण की पर्याय में उपादान की योग्यता में शादी करने का राग वर्त रहा था, तदनुसार वैसा ही व्यवसाय हो गया, होनहार भी ऐसी थी, तदनुसार निमित्त भी वैसे ही मिल गये और शादी हो गई। अब उपादान की योग्यता में मुनिभाव आ गया, अतः यही शादी वैराग्य में निमित्त बन रही है। इसमें अनहोना कुछ भी नहीं हुआ।**

तुमसे भी इसी भव में ऐसा पुरुषार्थ बनना था, जिससे तुम्हें स्वर्ग मिले, जो विषय भोगों में उलझे रहने में संभव नहीं था। अतः इसमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए और न ऐसा प्रश्न होना चाहिए कि 'शादी क्यों की?' देखो! किसी के करने से कुछ नहीं होता, जो होना होता है, उसके अनुसार ही सब बनाव स्वतः बन जाते हैं।''

यह वार्ता सुनकर विद्युच्चर के भावों में पुनः परिवर्तन हुआ और उसके चरण तो घर से उपवन की ओर मुड़ ही गये आचरण भी जम्बूकुमार और उनकी पत्नियों के साथ राग से विराग की ओर मुड़ गया।

विद्युच्चर सोचता है 'परिणामों की स्थिति विचित्र होती है', क्षण-क्षण में पलटती रहती है। दूसरों को क्या देखूँ? जब मैं अपने ही परिणामों को देखता हूँ तो ख्याल में आता है कि कहाँ 'सुकुमार राजकुमार की अवस्था मौज-मस्ती का परिणाम चला करता था और किशोरावस्था में कहाँ कलायें सीखने की तमन्ना? यौवन में कहाँ चौर्य कला में निष्णात होने के विकल्प और कहाँ ये संसार से विरक्त होने के परिणाम?

पिताजी के भी मेरे ही निमित्त से राजपाट से विरक्त होकर मुनि होने के परिणाम हो गये। मेरे परिणामों में भी मुनि होने का तीव्र विकल्प चल रहा है। इसी कारण तो किसी कवि ने ठीक ही कहा है ह्न

जीवन के परिणामनि की अतिविचित्रता देखहु प्राणी।
बंध-मोक्ष परिणमन ही तैं, कहत सदा ये जिनवर बाणी।।

अहिंसा महायज्ञ

छिन्दवाड़ा (म.प्र.) : यहाँ श्री अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन द्वारा जीव रक्षा एवं पर्यावरण सुरक्षा के लिये चलाये गये पटाखा विरोधी अभियान 'अहिंसामहायज्ञ' में 55 विद्यालयों के 7200 बच्चे सम्मिलित हुये। यह एक गौरवपूर्ण उपलब्धि है। सभी को यथा योग्य सम्मान के अतिरिक्त ड्रॉ द्वारा चयनित 151 छात्र-छात्राओं को आयोजित विशिष्ट समारोह में सम्मानित किया गया। प्रथम दो को सोने की चैन तथा अन्य 4 बालकों को सोने की अंगूठी पुरस्कार स्वरूप दी गई।

कार्यक्रम का संचालन फैडरेशन के श्री सचिव दीपकराज जैन ने तथा मंगलाचरण श्री ऋषभजी शास्त्री ने किया।

श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड

श्री टोडरमल स्मारक भवन

ए–4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राजस्थान)

शीतकालीन परीक्षा कार्यक्रम सत्र–2008

दिन व दिनांक	नाम ग्रन्थ
सोमवार 18 फरवरी 2008	1. बालबोध पाठमाला भाग–1 (बा.प्रथम खण्ड) मौखिक 2. जैन बालपोथी भाग–1 (मौखिक) 3. वीतराग–विज्ञान पाठमाला भाग–1(प्रवेशिका प्रथम खण्ड) 4. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग–1 5. छहढाला (पूर्ण) 6. तत्त्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) पूर्वार्द्ध 7. मोक्षमार्गप्रकाशक (पूर्वार्द्ध) 8. जैन सिद्धान्त प्रवेशिका (गोपालदासजी बरैया कृत) 9. विशारद प्रथम खण्ड (प्रथम वर्ष)
मंगलवार 19 फरवरी 2008	1. बालबोध पाठमाला भाग–2 (बा.द्वितीय खण्ड) मौखिक 2. जैन बालपोथी भाग–2 (मौखिक) 3. वीतराग–विज्ञान पाठमाला भाग 2(प्रवेशिका द्वितीय खण्ड) 4. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग–2 5. द्रव्यसंग्रह (पूर्ण) 6. तत्त्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) उत्तरार्द्ध 7. लघु जैनसिद्धान्त प्रवेशिका (सोनगढ़) 8. मोक्षमार्गप्रकाशक (उत्तरार्द्ध) 9. विशारद प्रथम खण्ड (द्वितीय वर्ष) 10. विशारद द्वितीय खण्ड (प्रथम वर्ष)
बुधवार 20 फरवरी 2008	1. बालबोध पाठमाला भाग–3 (बा.तृतीय खण्ड) मौखिक 2. वीतराग–विज्ञान पाठमाला भाग–3 (प्रवेशिका तृतीय खण्ड) 3. रत्नकरण्डश्रावकाचार (पूर्ण) 4. पुरुषार्थसिद्ध्युपाय (पूर्ण) 5. विशारद द्वितीय खण्ड (द्वितीय वर्ष)

नोट –

(1) सुविधानुसार परीक्षा का समय सुबह 9 बजे से शाम 5 बजे तक के बीच में कभी भी सैट किया जा सकता है।

(2) जहाँ एक से अधिक केन्द्र हों, वे आपस में मिलकर समय निश्चित करें।

(3) यदि किन्हीं विषयों के छात्र आपस में टकराते हों तो परीक्षा सुविधानुसार दिन में दो बार ली जा सकती है।

(4) बालबोध पाठमाला भाग 1, 2, 3 और जैन बालपोथी भाग 1 व 2 की परीक्षायें मौखिक लेवें। शेष सभी विषयों की परीक्षायें लिखित में लेवें।

जैन पत्र सम्पादक सम्मेलन सम्पन्न

मथुरा (उ.प्र.) : समाज सही दिशा में आगे बढ सके इसके लिये समाज के सजग प्रहरी समाचार पत्र तथा पत्रिकाओं का सशक्त एवं सबल होना आवयक है। यदि पत्र–पत्रिकाओं की दशा नहीं सुधरी तो समाज दिशा हीन हो जायेगा। यह निष्कर्ष दिगम्बर जैन संघ चौरासी मथुरा के सभागार में सम्पन्न अखिल भारतीय जैन पत्र सम्पादक सम्मेलन में उभरा।

13 नवम्बर,07 को आयोजित इस सम्मेलन का उद्घाटन प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाशजी जैन ने अपने उद्बोधन के माध्यम से किया। सम्मेलन में **जैन पत्रकारिता दशा और दिशा** पर विभिन्न सम्पादकों ने विचार व्यक्त किये।

अपरान्ह पंजाब केसरी के डायरेक्टर श्री स्वदेशभूषण जैन की अध्यक्षता में उपस्थित जैन पत्र सम्पादकों को सम्मानित किया गया। सम्मेलन में समाज के वरिष्ठ नेता श्री तारचन्द प्रेमी ने मंगलाचरण कर संघ की गौरवशाली परम्परा पर प्रकाश डाला। अन्य वक्ताओं में श्री स्वरूपचन्द जैन मारसन्स, डॉ. त्रिलोकचन्द कोठारी, श्री मदनलाल बैनाडा, श्री सतीश जैन ए.आई.आर, डॉ. राजेन्द्र बंसल, श्री रविन्द्र मालव, डॉ. पी.सी. रांवका, श्रीमती विमला जैन, श्री नरेन्द्रकुमार जैन, श्री सुरेशचन्द बारोलिया, श्री अनूपचन्द एडवोकेट आदि ने अपने विचार रखे।

सम्पादक संघ के संस्थापक एवं महामंत्री अखिल बंसल ने परिचर्चा की समीक्षा प्रस्तुत की।

त्रिदिवसीय विधान का आयोजन

दिल्ली : यहाँ अध्यात्मतीर्थ आत्मसाधना केन्द्र में भगवान महावीर स्वामी के 2534 वें निर्वाण महोत्सव पर दिनांक 9 से 11 नवम्बर, 07 तक त्रिदिवसीय विधान का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर आयोजित श्री महावीर पंचकल्याणक विधान पण्डित कांतिकुमारजी जैन इन्दौर, पण्डित संजीवजी जैन उस्मानपुर एवं पण्डित सन्मतिजी जैन पिड़ावा के निर्देशन में सम्पन्न हुआ। मंगल कलश स्थापना श्री पूनमचंदजी नरेशकुमारजी लुहाड़िया सफदरजंग एन्क्लेव द्वारा की गई।

आयोजन में डॉ.दीपकजी जैन जयपुर, विदुषी श्रीमती राजकुमारीजी जैन जयपुर, पण्डित श्री राकेशजी शास्त्री नांगलोई, पण्डित श्री ऋषभजी शास्त्री उस्मानपुर एवं श्री संदीपजी शास्त्री के प्रवचनों का लाभ भी मिला।

सम्पूर्ण कार्यक्रम बाल ब्र.जतीशचंदजी शास्त्री एवं पण्डित संदीपजी शास्त्री बाँसवाड़ा के निर्देशन में सम्पन्न हुआ।

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

23 से 29 दिसम्बर	**उदयपुर**	**सिद्धचक्र विधान**
30 व 31 दिसम्बर	**पौन्नूर हिल**	**शिविर**
1 से 8 जनवरी, 08	**चेन्नई**	**व्याख्यानमाला**
14 जनवरी, 08	**शिवपुरी**	**कलशारोहण**
15 से 20 जनवरी, 08	**बदरवास–शिवपुरी**	**पंचकल्याणक**
28 से 30 जनवरी, 08	**बावनगजा**	**मस्तकाभिषेक**
1 से 3 फरवरी, 08	**मंगलायतन**	**वार्षिकोत्सव**
5 से 11 फरवरी, 08	**द्रोणगिरि**	**पंचकल्याणक**

श्री गुरुदत्त कुन्दकुन्द कहान दि. जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट द्वारा तीर्थधाम सिद्धायतन में आयोजित

श्री महावीरस्वामी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव की

मंगल आमंत्रण

आमंत्रण पत्रिका विमोचन समारोह

अवश्य पधारें

बुधवार, दिनांक 9 जनवरी, 2008 प्रात: 11 बजे

सान्निध्य – ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित कोमलचन्दजी टड़ा द्रोणगिरि, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा ।

विमोचनकर्त्ता – श्री नगेन्द्रसिंह, मंत्री तकनीकी शिक्षा एवं नर्वदा घाटी विकास, म.प्र.शासन

अध्यक्षता – श्री कपूरचंदजी घुवारा, अध्यक्ष म.प्र. हस्तशिल्प विकास निगम (केबिनेट मंत्री दर्जा)

आप सभी को कार्यक्रम में इष्ट–मित्रों सहित पधारने हेतु हमारा हार्दिक आमंत्रण है।

प्रतिष्ठा महोत्सव हेतु आवास बुकिंग फार्म

मुखिया का नाम ....पत्र व्यवहार का पता ....

....

फोन : एस.टी.डी कोड :................. घर का नम्बर : .... मोबाईल नम्बर : ....

महोत्सव स्थल पहुँचने की तारीख व समय ....(लौटने की)............... आने का साधन : प्लेन / ट्रेन / स्वयं का साधन

यदि प्लेन अथवा ट्रेन से आ रहे हैं तो उसका विवरण ह्न ....

आनेवाले व्यक्तियों की संख्या ह्न पुरुष .... महिलायें .... बच्चे .... कुल ....

आवास हेतु प्राथमिकता ह्न (ए) द्रोणगिरि में ही (बी) बड़ामलहरा / घुवारा में (सी) टैन्ट ह्न ए वर्ग, बी वर्ग, सी वर्ग (टिक करें)

बुकिंग राशि (अंकों में)..................(शब्दों में) .... चैक/ड्राफ्ट नं...............

नोट : टैन्टों की बुकिंग के लिये निम्नानुसार टैन्ट वर्ग की रेट देखकर उतनी राशि का डी. डी./मनिऑर्डर 'श्री महावीरस्वामी दि. जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव समिति' के नाम से भेजें या पंजाब नैशनल बैंक के खाता नं. 0420000108245404 में जमा करके स्लिप फार्म के साथ भेजें।

सम्पर्क सूत्र –(1) सेठ गुलाबचन्द जैन, सुभाष ट्रांसपोर्ट, गुजराती बाजार, सागर (म.प्र.) मो. 09425170987

(2) डॉ. गुलाबचन्द जैन, कार्यालय मंत्री, सिद्धायतन, मु.पो. द्रोणगिरि, तह. बड़ामलहरा, छतरपुर (म.प्र.) मो. 09425305708

टैन्ट एवं उसकी बुकिंग राशि का विवरण

ए वर्ग ह्न टीन शेड का 12 ह्न 18 का कमरा, फर्श के साथ बना हुआ। लैट्रिन बाथरूम अटैच, 4 व्यक्तियों के हिसाब से बिस्तर मय पलंग, किराया पूरे महोत्सव के लिये 5000/–अथवा 1000/– रुपये प्रतिदिन।

बी वर्ग ह्न ई.पी. टैन्ट 12ह्न18 का हॉल, फर्श के साथ बना हुआ, लैट्रिन–बाथरूम कॉमन, छ: व्यक्तियों के हिसाब से आवश्यक बिस्तर । किराया पूरे महोत्सव के लिये 1000/– रुपये ।

सी वर्ग ह्न 30ह्न40 के कॉमन हॉल। (नि:शुल्क)

ध्यान दें ! आवश्यक सूचना...

(1) महोत्सव में आनेवाले महानुभावों से निवेदन है कि वे इस फार्म को भरकर आवास की बुकिंग अनिवार्यरूप से करा लें। टैन्ट बुकिंग की अंतिम तिथि 10 जनवरी,08 है। (2) सुरक्षा की दृष्टि से मूल्यवान वस्तुयें लेकर कदापि न आवें। (3) बुन्देलखण्ड की यात्रा के लिये गाडी आदि की व्यवस्था हेतु यातायात प्रभारी श्री अमितोषजी से मोबाईल नं. 09425171975 पर सम्पर्क करें। **(4)** शीत ऋतु का समय होने से आवश्यक वस्त्रादि अपने साथ लेकर आवें।

(यहाँ से काटकर, भरकर भेजें)

रजिस्ट्रेशन रसीद

आवास रजिस्ट्रेशन क्रमांक .... दिनांक .... राशि .... रसीद नं. .... हस्ताक्षर ....

तत्त्वचर्चा

छहढाला का सार 18

– डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे ...)

इस सन्दर्भ में कविवर पण्डित भूधरदासजी की वैराग्यभावना में प्रस्तुत निम्नांकित पंक्तियाँ भी द्रष्टव्य हैं ह्न

देह अपावन अथिर घिनावन, यामैं सार न कोई।
सागर के जल सौं शुचि कीजै, तो भी शुद्ध न होई।।
सात कुधातमयी मलमूरत, चाम लपेटी सोहै।
अन्तर देखत या सम जग में, अवर अपावन को है।।
नव मलद्वार स्रवैं निशि-वासर, नाम लिए घिन आवै।
व्याधि उपाधि अनेक जहाँ तहँ, कौन सुधी सुख पावै ?
पोषत तो दुख दोष करै अति, सोषत सुख उपजावै।
दुर्जन देह स्वभाव बराबर, मूरख प्रीति बढ़ावै।।
राचन जोग स्वरूप न याको, विरचन जोग सही है।
यह तन पाय महातप कीजे, यामैं सार यही है।।[1]

यह देह अत्यन्त अपवित्र है, अस्थिर है, घिनावनी है; इसमें रंचमात्र भी सार नहीं है। सागरों के जल से धोये जाने पर भी शुद्ध नहीं होगी।

चमड़े में लिपटी शोभायमान दिखनेवाली यह देह सात कुधातुओं से निर्मित मल की मूर्ति ही है; क्योंकि अन्तर में देखने पर पता चलता है कि इसके समान अपवित्र जगत में अन्य कोई पदार्थ नहीं है।

इसके नव द्वारों से दिन-रात ऐसा मैल बहता रहता है, जिसके नाम लेने से ही घृणा उत्पन्न होती है। जिसे अनेक व्याधियाँ और उपाधियाँ निरन्तर लगी रहती हैं, उस देह में रहकर आजतक कौन बुद्धिमान सुखी हुआ है ?

इस देह का स्वभाव दुर्जन के समान है; क्योंकि इसमें भी दुर्जन के समान पोषण करने पर दु:ख और दोष उत्पन्न होते हैं और शोषण करने पर सुख उत्पन्न होता है। फिर भी यह मूर्ख जीव इससे प्रीति बढ़ाता है।

इसका स्वरूप रमने योग्य नहीं है, अपितु छोड़ने योग्य ही है; अत: हे भव्य प्राणियों ! इस मानव तन को पाकर महातप करो; क्योंकि इस नरदेह पाने का सार आत्महित कर लेने में ही है।

उक्त छन्दों में देह के अशुचि स्वरूप का वैराग्योत्पादक चित्रण कर अन्त में कहा गया है कि '**अस देह करे किम यारी**' अर्थात् ऐसी अशुचि देह से क्या प्रेम करना ? तथा '**राचन जोग स्वरूप न याको, विरचन जोग सही है**' अर्थात् इसका स्वरूप रमने योग्य नहीं; छोड़ने योग्य ही है।

मैंने स्वयं अशुचि भावना के सन्दर्भ में लिखा है कि ह्न

इस देह के संयोग में जो वस्तु पलभर आयेगी।
वह भी मलिन मल-मूत्रमय दुर्गन्धमय हो जायेगी।।
किन्तु रह इस देह में निर्मल रहा जो आतमा।
वह ज्ञेय है श्रद्धेय है बस ध्येय भी वह आतमा।।

जो पानी सबको पवित्र करता है, वह पानी मुँह के स्पर्श से अपवित्र (जूठा) हो जाता है। हाथ की चक्की का आटा, अठपहरा शुद्ध घी और कुये के पवित्र पानी से बना हुआ परम पवित्र हलुआ इस मुँह के स्पर्शमात्र से अपवित्र हो जाता है। उक्त हलुवा खाने के दस मिनिट बाद ही वमन हो जावे तो कोई उसे छूना भी पंसद नहीं करता और यदि वह हलुवा आठ-दस घंटे शरीर के संयोग में रहकर किसी रास्ते बाहर आवे तो लोग उसे देखना पसंद नहीं करते, उसका नाम लेना पसंद नहीं करते।

उस परम पवित्र हलुवा की यह दुर्दशा इस देह की संगति से ही तो हुई है। समझ लो यह देह कितनी पवित्र है ? पर ध्यान देने योग्य बात यह है कि इस देह के संयोग में अनंत काल रहने पर भी जो आत्मा स्वभाव से अपवित्र नहीं हुआ, परमपवित्र ही बना रहा; वह आत्मा ही जानने योग्य है, श्रद्धान करने योग्य है और ध्यान करने योग्य है; क्योंकि उस आत्मा के ज्ञान, श्रद्धान और ध्यान से ही अनन्त अतीन्द्रिय आनन्द की प्राप्ति होती है। इसप्रकार हम देखते हैं कि अनित्यभावना से लेकर अशुचिभावना तक का सम्पूर्ण चिन्तन संयोगी पदार्थों के इर्द-गिर्द ही घूमता रहता है। संयोगी पदार्थों में भी आत्मा के अत्यन्त निकटवर्ती संयोगी पदार्थ होने से शरीर ही केन्द्रबिन्दु बना रहा है। अनित्यभावना में मृत्यु की चर्चा करके शरीर के संयोग की ही क्षणभंगुरता का चिन्तन किया गया है। अशरणभावना में 'मरने से कोई बचा नहीं सकता' की बात करके शरीर के संयोग को अशरण कहा जाता है। इस संसार में अनेक देहों को धारण किया, पर किसी देह के संयोग में सुख प्राप्त नहीं हुआ। यह संसार भावना की बात हुई।

शरीर के संयोग-वियोग का नाम ही तो जन्म-मरण है; जन्म-मरण के अनन्त दु:ख भी जीव अकेला ही भोगता है, कोई भी संयोग साथ नहीं देता; देहादि सभी संयोगी पदार्थ आत्मा से अत्यन्त भिन्न ही हैं ह्न यही चिन्तन एकत्व और अन्यत्व भावनाओं में होता है। अपने और पराये शरीर की अशुचिता का विचार ही अशुचिभावना में किया जाता है।

इसप्रकार यह निश्चित है कि उक्त सम्पूर्ण चिन्तन देह को केन्द्रबिन्दु बनाकर ही चलता है। उक्त सम्पूर्ण चिन्तनप्रक्रिया का एकमात्र प्रयोजन दृष्टि को देहादि संयोगी पदार्थों पर से हटाकर स्वभावसन्मुख ले जाना है। उक्त प्रयोजन को लक्ष्य में रखकर ही अनित्यादि भावनाओं की चिन्तन-प्रक्रिया के स्वरूप का निर्धारण हुआ है।

अबतक का सम्पूर्ण चिन्तन वैराग्यप्रेरक था; जिसने चित्त की भूमि को तत्त्वज्ञान का बीज बोने योग्य बना दिया। अत: अब आगे की भावनाओं में तत्त्वसंबंधी चिन्तन चलेगा।

संयोगों की चर्चा के उपरान्त अब संयोगी भावरूप आस्रव, बंध और पुण्य-पाप के प्रतिनिधि के रूप में आस्रव भावना की चर्चा करते हैं।

यह तो आप जानते ही हैं कि बारह भावनाओं में पुण्य, पाप और बंध नाम की कोई भावना नहीं है। अत: यह स्वाभाविक ही है कि ये आस्रवभावना में ही शामिल हैं।

जो योगन की चपलाई तातैं ह्वै आस्रव भाई।
आस्रव दुखकार घनेरे बुधिवंत तिने निरवेरे।।

मन-वचन-काय रूप योगों के निमित्त से जो आत्मप्रदेशों में कंपन होता है, उससे कर्मों का आस्रव होता है। ये आस्रव घना दु:ख देनेवाले हैं; इसलिए बुद्धिमान लोग उनका निरोध कर देते हैं।

पुण्यास्रव और पापास्रव के भेद से आस्रव दो प्रकार का होता है।

इसीप्रकार शुभास्रव और अशुभास्रव के भेद से भी आस्रव दो प्रकार का माना गया है। ध्यान रहे बंध के कारणभूत आस्रवभाव चाहे शुभरूप हों, चाहे अशुभरूप; चाहे पुण्यरूप हों, चाहे पापरूप ह्न सभी आस्रवों को यहाँ घना दु:ख देनेवाला कहा गया है।

समयसार की ७२वीं एवं ७४वीं गाथाओं में भी बिना किसी भेदभाव

के सभी प्रकार के आस्रवभावों को अशुचि, अध्रुव, अनित्य, दु:खरूप और दु:ख का कारण बताया गया है।

दूसरी ढाल में आस्रव और बंधतत्त्वसंबंधी भूल के प्रकरण में इस बात पर विस्तार से प्रकाश डाला जा चुका है; अत: यहाँ विशेष विस्तार की आवश्यकता नहीं है।

संयोग और संयोगी भावों संबंधी भावनाओं की चर्चा विस्तार से हुई; अब असंयोगी निर्मलभावरूप संवर–निर्जरा भावना की चर्चा करते हैं।

संवर भावना का स्वरूप छहढाला में अत्यन्त मार्मिक रूप से इसप्रकार प्रस्तुत किया गया है ह्न

जिन पुण्य–पाप नहिं कीना आतम अनुभव चित दीना।
तिन ही विधि आवत रोके, संवर लहि सुख अवलोके।।

जिन्होंने पुण्य–पापरूप आस्रवभावों को न करके आत्मा के अनुभव में चित्त को लगाया है; उन्होंने ही आते हुये द्रव्यकर्मों को रोक दिया है। इसप्रकार द्रव्यास्रव और भावास्रव के अभावपूर्वक जिन्होंने द्रव्यसंवर और भावसंवर प्राप्त कर लिया है; उन्होंने ही सुख प्राप्त किया है।

ध्यान रहे उक्त छन्द में आत्मानुभव को ही संवर कहा है। इसप्रकार आत्मानुभव या आत्मानुभव की भावना ही संवर भावना है।

छहढाला में निर्जराभावना संबंधी छन्द इसप्रकार है ह्न

निज काल पाय विधि झरना, तासो निज काज न सरना।
तप करि जो कर्म खिपावै, सोई शिवसुख दरसावै।।

समय आने पर जो कर्म झड़ते हैं, उससे आत्महित का कार्य सिद्ध नहीं होता। शुद्धपरिणति और शुद्धोपयोगरूप ध्यान तप से जो कर्म कटते हैं; उससे ही मोक्षसुख की प्राप्ति होती है।

मूलत: बात यह है कि जो कर्म बंधे हैं, वे अपनी स्थिति के अनुसार सत्ता में रहते हैं; किन्तु जब उदय काल आता है तो उदय में आकर, फल देकर खिर जाते हैं। शास्त्रों में इस खिरने को भी निर्जरा शब्द से कहा गया है; इसे सविपाक निर्जरा कहते हैं।

इसप्रकार की निर्जरा से आत्मा को कोई लाभ नहीं है; क्योंकि मोहकर्म के उदय में जो मोह–राग–द्वेषभाव होते हैं; उनसे उक्त निर्जराकाल में भी नवीन कर्मबंध होता है। वह निर्जरा किस काम की, जिसके साथ कर्मबंध की प्रक्रिया जुड़ी हुई है। निर्जरा तो वही वास्तविक है, काम की है कि जिसमें कर्मों के झड़ने के साथ आगामी कर्मबंध न हो।

संवर–निर्जरा भावना में मोक्ष की भावना को भी सामिल कर लेना चाहिये; क्योंकि मोक्ष भावना नाम की कोई भावना नहीं है।

धर्म की उत्पत्ति संवर है, धर्म की वृद्धि निर्जरा है और धर्म की पूर्णता मोक्ष है। वस्तुत: आत्मशुद्धि ही धर्म है। अत: इसे इसप्रकार भी कह सकते हैं कि शुद्धि की उत्पत्ति संवर है, शुद्धि की वृद्धि निर्जरा है और शुद्धि की पूर्णता मोक्ष है।

संयोग अनित्य हैं, अशरण हैं, असार हैं, अशुचि हैं, सुख–दु:ख में साथ देनेवाले नहीं हैं; क्योंकि वे अपने आत्मा से अत्यन्त भिन्न हैं।

आरंभिक छह भावनाओं में संयोगों के संदर्भ में इसप्रकार का चिन्तन करने के उपरान्त सातवीं आस्रवभावना में 'संयोग के लक्ष्य से आत्मा में ही उत्पन्न होनेवाले संयोगीभाव ह्न चिद्विकार ह्न मोह–राग–द्वेषरूप आस्रवभाव भी अनित्य हैं, अशरण हैं, अशुचि हैं, दु:खरूप हैं, दु:ख के कारण भी हैं; अत: हेय हैं और भगवान आत्मा नित्य है, परमपवित्र है, परमानन्दरूप है एवं परमानन्द का कारण भी है; अत: ध्येय है, श्रद्धेय है, आराध्य है, साध्य है एवं परम–उपादेय भी है' ह्न इसप्रकार का चिन्तन किया गया है।

इसप्रकार संयोग और संयोगी भावों से विरक्ति उत्पन्न कर संवर और निर्जरा भावना में पर और पर्यायों से भिन्न निज भगवान आत्मा के आश्रय से उत्पन्न होनेवाली निर्मलपर्यायरूप शुद्धि और शुद्धि की वृद्धि की उपादेयता का चिन्तन किया गया; क्योंकि शुद्धि की उत्पत्ति व स्थितिरूप संवर तथा वृद्धिरूप निर्जरा ही अनन्त सुखरूप मोक्ष प्रगट होने के साक्षात् कारण हैं।

इसप्रकार ज्ञेयरूप संयोग, हेयरूप आस्रवभाव एवं उपादेयरूप संवर–निर्जरा के सम्यक् चिन्तन के उपरान्त अब लोकभावना में षट्द्रव्यमयी लोक के स्वरूप पर विचार करते हैं।

लोकभावना के सन्दर्भ में छहढाला में कहा गया है कि ह्न

किनहू न करयो न धरै को, षट्द्रव्यमयी न हरै को।
सो लोक माहिं बिन समता, दुख सहै जीव नित भ्रमता।।

छह द्रव्यों के समुदायरूप इस लोक को न तो किसी ने बनाया है, न कोई इसे धारण किये है और न कोई इसका विनाश ही कर सकता है। इस लोक में यह आत्मा अनादि काल से समताभाव के बिना भ्रमण करता हुआ अनन्त दु:ख सह रहा है।

कविवर पण्डित भूधरदासजी कृत बारह भावना में लोकभावना संबंधी छन्द इसप्रकार है ह्न

चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संठान।
तामें जीव अनादि तैं, भरमत है बिन ज्ञान।।

इस पुरुषाकार चौदह राजू ऊँचे लोक में यह जीव आत्मज्ञान बिना अनादिकाल से ही भ्रमण कर रहा है।

उक्त दोनों भावनाओं में नीचे की पंक्ति का भाव तो लगभग समान ही है; क्योंकि दोनों में ही बताया गया है कि जीव अनादि से ही लोक में भ्रमण करता हुआ दु:ख भोग रहा है। अन्तर मात्र इतना है कि एक में दु:ख का कारण समताभाव का अभाव बताया गया है और दूसरी में सम्यग्ज्ञान का अभाव, पर इसमें कोई विशेष बात नहीं है; किन्तु ऊपर की पंक्ति में जो लोक के स्वरूप का प्रतिपादन है, वह भिन्न–भिन्न है। एक में लोक को स्वनिर्मित, स्वाधीन, अविनाशी और षट्द्रव्यमयी बताया गया है; तो दूसरी में चौदह राजू ऊँचा पुरुषाकार निरूपित किया गया है।

एक ने न्यायशास्त्र को आधार बनाया है तो दूसरे ने करणानुयोग को। इस जगत का कोई कर्त्ता, धर्त्ता और हर्त्ता नहीं है ह्न यह न्यायशास्त्र की बात है और पुरुषाकार चौदह राजू ऊँचे लोक का निरूपण करणानुयोग का विषय है।

लोकभावना में छह द्रव्यों के समुदायरूप लोक की बात भी चिन्तन का विषय बनती और लोक की भौगोलिक स्थिति भी। लोकभावना की विषय–वस्तु संबंधी उक्त दोनों प्रकारों में से दौलतरामजी ने प्रथम प्रकार को एवं भूधरदासजी ने दूसरे प्रकार को पकड़कर अपनी बात प्रस्तुत कर दी है; पर एक बात अवश्य ध्यान देने योग्य है कि लोकभावना की जो मूल भावना है, वह दोनों में समान रूप से विद्यमान है।

मूल बात लोक के स्वरूप प्रतिपादन की नहीं, सम्यग्ज्ञान और समताभाव बिना जीव के अनादि परिभ्रमण की है; क्योंकि सम्यग्ज्ञान और समताभाव की तीव्रतम रुचि जागृत करना ही इन भावनाओं के चिन्तन का मूल प्रयोजन है। **(क्रमश:)**

17 दिसम्बर 2007, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

शिविर एवं विधान सम्पन्न

खनियांधाना (म.प्र.) : यहाँ श्री नंदीश्वर दिगम्बर जैन मंदिर में दिनांक 6 से 11 नवम्बर, 07 तक शिविर एवं विधान का आयोजन ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित राजमलजी इन्दौर, पण्डित सचिनजी अकलूज, पण्डित संजयजी पुजारी, श्री टोडरमल सिद्धान्त महाविद्यालय, जयपुर में अध्ययनरत विद्यार्थियों एवं स्थानीय विद्वानों के मंगल सानिध्य में सम्पन्न हुआ। पंच परमेष्ठी विधान पण्डित महेन्द्रजी शास्त्री इन्दौर, पण्डित मुकेशजी काठेदार खनियांधाना के आचार्यत्व में किया गया। मंगल कलश श्री राजकुमार दीपककुमारजी परिवार की ओर से स्थापित किया गया।

समापन के अवसर पर ब्र. सुमतप्रकाशजी ने वीतराग-विज्ञान पाठशाला को स्कूल विधि से चलाने की बात कही। अंत में दीपावली पर फटाके न चलाने का नियम लेनेवाले छात्र-छात्राओं को पुरस्कृत किया गया। **ह्न सुनील जैन सरल (मंत्री)**

वैराग्य समाचार

1. **वहन्नूर (महा.) निवासी श्री सुरेन्द्रबन्डूजी चौगुले** का दिनांक 3 दिसम्बर, 07 को 75 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। आप अनेक वर्षो से सर्वोदय स्वाध्याय समिति, कोल्हापुर के सक्रिय कार्यकर्त्ता थे।

आपकी प्रेरणा से आपका सुपौत्र **संदीप चौगुले** वर्तमान में टोडरमल महाविद्यालय, जयपुर में अध्ययनरत है। आपकी स्मृति में जैनपथ प्रदर्शक व वीतराग-विज्ञान को कुल 200/- रुपये की राशि प्राप्त हुई है।

2. महाविद्यालय के स्नातक डॉ. योगेशचन्दजी जैन की मातुश्री **श्रीमती प्रकाशवती जैन** ध.प. स्व.वैद्य गम्भीरचन्दजी जैन का दिनांक 16 नवम्बर, 07 को 83 वर्ष की आयु में समाधिपूर्वक शांत परिणामों से देहावसान हो गया है। आप धार्मिक एवं स्वाध्यायप्रिय महिला थीं। जयपुर में आयोजित होनेवाले शिविरों में आपकी उपस्थिति रहती थी। आपकी स्मृति में जैनपथप्रदर्शक एवं वीतराग-विज्ञान को 100/- रुपये प्राप्त हुये।

दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही निर्वाण को प्राप्त हो ह्न यही भावना है।

स्लिपडिस्क रोगी ध्यान दें !

सम्पूर्ण उपचार बिना दवा, बिना कसरत, बिना चीरफाड, बिना आराम किए विश्व की नवीनतम तकनीक माइक्रो एक्यूप्रेशर द्वारा शीघ्र उपचार।

डॉ. पीयूष त्रिवेदी (मो.) 09828011871

गोल्ड मेडलिस्ट, बी.ए. एम.एस., एम.डी. (एक्यू.)

डिप्लोमा इन योगा, सुजोक (मास्को) एफ.ए.आर.सी. एस. (लंदन)

मेडिनोवा पोली क्लीनिक, केसरगढ, जे.एल.एन. मार्ग, जयपुर

समय : सायं 6 बजे से 9 बजे तक, रविवार को प्रात: 8 से 12 बजे तक

नोट-एक्यूप्रेशर सेवा समिति द्वारा 300 से अधिक नि:शुल्क शिविर आयोजित।

अन्य रोग : जोडों का दर्द, गर्दन का दर्द, मोटापा, मायोपैथी, मानस विकृतियां, मधुमेह तथा उच्च रक्तचाप आदि की सफल चिकित्सा।

अष्टान्हिका महापर्व सम्पन्न

1. **अजमेर (राज.) :** यहाँ श्री वीतराग-विज्ञान स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट के तत्त्वावधान में श्री सीमंधर जिनालय पुरानी मण्डी में पर्व के अवसर पर दिनांक 17 से 24 नवम्बर, 07 तक पंचमेरू नंदीश्वर एवं भक्तामर विधान का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर पण्डित कमलचंदजी जैन पिड़ावा के समयसार के संवराधिकार पर तथा प्रवचनसार के ज्ञेयतत्त्वप्रज्ञापनाधिकार पर हुए प्रवचनों का एवं पण्डित अश्विनकुमारजी शास्त्री के नियमसार पर हुए प्रवचनों का लाभ भी समाज को मिला। **ह्न विजयकुमार**

2. **कोटा (राज.) :** यहाँ अष्टान्हिका महापर्व के अवसर पर जयपुर से पधारी विदुषी राजकुमारीजी जैन द्वारा प्रात: **मोक्ष का मूल : भेदज्ञान** एवं रात्रि में जिनेन्द्र भक्ति के उपरान्त **जैसी मति वैसी गति** विषय पर धर्मचर्चा की गई। ज्ञातव्य है कि पर्वोपरान्त झालरापाटन (राज.) में भी आपके एक दिन समयसार पर हुए प्रवचन का लाभ मिला।

जैन आचार मीमांसा पर संगोष्ठी

नई दिल्ली : श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली के तत्त्वावधान में दिनांक 22 नवम्बर, 07 को **जैन आचार मीमांसा** विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया। संगोष्ठी में जैन दर्शन विभाग के अध्यक्ष डॉ. वीरसागर जैन ने कहा कि जैनधर्म में आचार पक्ष पर अधिक बल दिया है। इसके साथ ही वरिष्ठ अध्यापक डॉ. अनेकान्त जैन ने श्रावक के व्रतों व ग्यारह प्रतिमाओं पर विचार प्रस्तुत किये।

संगोष्ठी में जैन आचार साहित्य की एक प्रदर्शनी भी लगाई गई, जिसमें श्रावकाचार संग्रह तथा मूलाचार आदि ग्रंथों को सभी के अवलोकनार्थ प्रस्तुत किया गया। सभा की अध्यक्षता करते हुए न्यायदर्शन विभाग के अध्यक्ष प्रो.पीयूषकान्त दीक्षित ने कहा कि जैन परम्परा ने आज पूरे भारत की मूल आचार पद्धति को जीवित बना कर रखा है।

ह्न डॉ. अनेकान्त जैन

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.

प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा**, डबल एम.ए.(जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन; इतिहास), नेट, एम.फिल

प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें -

ए- ४ बापूनगर, जयपुर - ३०२०१५ (राज.)

फोन : (०१४१) २७०५५८१, २७०७४५८

फैक्स : (०१४१) २७०४१२७